वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नाटयसंगीत तथा संगीत नाटकों का बदलता स्वरूप

डॉ. अनया थत्ते

सह–अध्येता, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, सिमला.

anaya_thatte@yahoo.co.in

महाराष्ट्र को संगीत नाटकों की 150 वर्षोंसे भी अधिक परंपरा प्राप्त है। इन वर्षोंमें इस प्रदेश ने संगीत नाटक तथा नाटयसंगीत के कईं रागोंका आस्वादन किया है। प्रस्तुत शोधपत्र में इसी बदलते स्वरूप को जानने का प्रयास किया गया है। नाटयसंगीत तथा संगीत नाटकोंके प्रेमियोंको इन परिवर्तनोंसे अवगत कराना यही इस शोधपत्र का प्रमुख उद्देश्य है।

महाराष्ट्र में मराठी संगीत नाटकों की शुरूवात 1843 में हुई। उत्तर कानडा प्रांत में भागवत नामक दशावतारी नाटक प्रस्तुत किए जाते थे। इन्हीं नाटकोंसे प्रेरणा लेकर श्री. विष्णुदास भावेजी द्वारा सीता स्वयंवर नाटक की रचनाा की गयी। इसी नाटक को संगीत नाटक के प्राथमिक स्वरूप की प्रेरणा के रूप में देखा जाता है। इसमें नाटक का सूत्रधार कीर्तनकार की वेशभूषा में रंगभूमी पर मंगलाचरण तथा ईशस्तुतीपर पद प्रस्तुत करता था। तत्पश्चात विदूषक के पात्र द्वारा नाटक का कथानक किस प्रकार होगा इसकी जानकारी विनोद प्रचूर भाषा में दी जाती थी। सूत्रधार द्वारा गणेश तथा सरस्वती स्तवन के बाद नाटक के अन्य पात्र कथाभाग के अनुसार उत्स्फूर्त संवाद प्रस्तुत करते थे। मात्र संगीत का पक्ष केवल सूत्रधार ही संभालता था। अन्य पात्रोंके लिए भी पदों का गायन वही करता था।

1880 में बलवंत पांडुरंग उपाख्य अण्णासाहेब किर्लोस्करजीद्वारा महाकवी कालिदासजीके शाकुंतल नाटक का मराठी अनुवादित स्वरूप रंगभूमी पर प्रस्तुत किया जिसमें सूत्रधार तथा नटी संवाद के रूप में नाटक की कथा वर्णन करते थे। किर्लोस्करजी ने सूत्रधार से संपूर्ण नाटक में पदप्रस्तुती की जिम्मेदारी निकालकर अलग अलग पात्रों पर सौंप दी। इससे संगीत नाटक में काम करने के लिए विविध पात्रों का चयन करते समय उनकी गानकुशलता देखना आनवार्य हो गया। उन्होंने दुष्यंत, कण्वमुनि तथा अन्य पात्रों के लिए पदरचना की, परंतु शकुंतला के लिए पदों की रचना गोविंद बल्लाळ देवलजी से करवाई।

आगे चलकर देवलजीने भी अपने नाटकोंमें कीर्तन, तमाशा, लोकसंगीत, शास्त्रीय संगीत का प्रयोग किया। उनके द्वारा लिखित संशयकाल्लोळ नाटक मूलतः गद्य स्वरूप में था, परंतु संगीत नाटकोंकी बढती हुई लोकप्रियता को देखकर इस नाटक में संगीत प्रस्तुती की जगह ढूंढकर संगीत डाला गया और वह नाटक संगीत नाटक के रूप में लोकप्रिय हुआ। इस नाटक में उन्होंने पहली बार संगीत के जलसे के प्रवेश का उपयोग किया जिससे यह नाटक लोकप्रियता की चरमसीमा तक पहुंचा।

नाटकोंमें स्वतंत्र रूप से संगीतकार की योजना ना होने के कारण किर्लोस्कर तथा देवलजी के समय पात्र स्वयं अपने अपने पदों को संगीतबध्द करते थे। इससे किसी भी प्रयोग के समय पदोंकी धुनोंकी पुनरावृत्ती होना संभव नहीं था। इनके पश्चात आए श्रीपाद कृष्ण कोल्हटकरजीने अपने नाटकोंसे नटी, सूत्रधार के पात्रों को हटाकर उनकी जगह छोटे बालकोंद्वारा सामूहिक गायन तथा वर्णन की योजना की। सूत्रधार के साथ ही नाटकोंसे कीर्तनी परंपरा का भी उच्चाटन किया। आपने नाटकोंके लिए पौराणिक विषयोंकी जगह सामाजिक विषयोंको अधिक महत्त्व दिया। नाटक के संगीत में नवीनता लाने की इच्छा से गुजराती तथा पारसी रंगभूमी के संगीत का चमत्कृतिपूर्ण उपयोग करते करते उनका संगीत क्लिष्टता की ओर झुका। इसी कारण इनके

नाटक रंगभूमी पर उतने यशस्वी नहीं हुए। इसी काल में मिल मजदूरोंको आकर्षित करनेवाले बँड संगीत के आधार पर दिए गए संगीत का उपयोग संगीत नाटकों में किया गया।

उस समय सामाजिक बंधनों के कारण शास्त्रीय संगीत के कलाकारोंको सुनने का अवसर सामान्य जनता को प्राप्त नहीं होता था। उनके कार्यक्रम केवल राजदरबारोंमें निमंत्रित रसिकों के सामने हुआ करते थे। सामान्य रसिकोंतक शास्त्रीय संगीत को पँहुचानेका काम इस युग के महान संगीतकार गोविंदराव टेंबे जी ने संगीत नाटकोंके माध्यमसे किया। संगीत नाटकोंके सर्वप्रथम स्वतंत्र संगीतकार होने का मान आपको मिला। संगीत नाटकोंके प्राथमिक काल में इन नाटकों का स्वरूप चार लोग इकठठा होकर किसी ने लिखे हुए नाटकको उत्स्फूर्त संवादों के साथ मनोरंजनार्थ प्रस्तुत करना इसी प्रकार का होता था। आगे चलकर गंधर्व नाटक मंडली, ललित कलादर्श, कोल्हापूरकर नाटक मंडली, बलवंत नाटक मंडली आदि नाटक मंडलियोंका उदय होने के पश्चात नाटक के लिए संगीत दिग्दर्शक, कथालेखक, पात्र, और मंडली चलाने के लिए मॅनेजर की नियुक्ति व्यावसायिक रूप में होने लगी। नए नए नाटककारोंको मिलकर नाटक की कथा निश्चित करना, लिखे हुए नाटक पर चर्चा करना, नाटक की तालीम लेना, उसके प्रयोग अलग अलग गावोंमें निश्चित करना, उन गावोंमें मंडली की खान पान तथा निवास व्यवस्था करना आदि जिम्मेदारीयाँ नाटक के मॅनेजर द्वारा निभायी जाती थी। आज भी यही कार्यपध्दती संगीत नाटक मंडलियोंद्वारा अपनायी जाती है। काकासाहब खाडिलकर जी लिखित मानापमान तथा स्वयंवर नाटकोंके पदों को टेंबेजी ने शास्त्रीय संगीत की पारंपारिक बंदिशोंपर आधारित संगीत दिया। राजदरबारोंके गायक ही इन नाटकोंमें अलग अलग भूमिकाऐं निभाते थे। इस प्रकार उन्हें रागदारी संगीत को रंगमंच पर प्रस्तुत कर उसे लोकप्रिय बनाने का अवसर भी प्राप्त होता था। इसप्रकार नाटयसंगीत के रूप में महाराष्ट्र में शास्त्रीय संगीत के प्रचार प्रसार का कार्य हुआ और शास्त्रीय संगीत महाराष्ट्र के घर घर में पँहुंचा। खाडिलकर जी के स्वयंवर नाटक में संगीत दिग्दर्शक भास्करबुवा बखले जी ने शास्त्रीय तथा ललित संगीत का मिलाप कर पदोंको संगीतबध्द किया। उस समय के सबसे लोकप्रिय गायक नट बालगंधर्वजी के नाम से नाटयसंगीत की गायकी को बढावा देनेवाला गंधर्व ठेका भी निर्माण हुआ। बालगंधर्वजी के समय को संगीत नाटकोंका स्वर्णिम युग कहा जाता है। इस समय तक संगीत नाटक तथा नाटयसंगीत संगीत जनमानस में लोकप्रिय हेा चुका था। अलग अलग नाटक मंडलियाँ शास्त्रीय संगीत के कईं श्रेष्ठतम कलाकारोंको संगीतकार, तालीम मास्तर अथवा गायक नट अथवा नटी के रूप में अपनी मंडली में शामिल कर संपूर्ण महाराष्ट्र में संगीत नाटकोंके माध्यम से शास्त्रीय, उपशास्त्रीय तथा ललित संगीत का बखूबी प्रचार प्रसार कर रहीं थी। इससे संगीत नाटक के प्रति जनमानस में आकर्षण निर्माण हुआ और संगीत नाटकोंको लोकाश्रय प्राप्त हुआ।

1927 के पश्चात नाटयसंगीत में अभंग गायन की विधा का भी समावेश हुआ। इसका प्रमुख कारन यह रहा की अब तक के संगीत नाटकों के विषय पूर्णतः पौराणिक थे परंतु 1927 के पश्चात साध्वी मीराबाई, संत कान्होपात्रा, संत गोरा कुंभार, आदि संतोंके चरित्रोंपर भी संगीत नाटक लिखे गए। इसप्रकार संतोंद्वारा रचित अभंगोंको नाटयपदोंके रूप में सुनने का सुअवसर भी रसिकों को प्राप्त हुआ। 1935 के उपरांत स्वतंत्र भारत की प्रेरणा से प्रभावित रणदुंदुभी, संन्यस्तखड्ग आदि देशभक्तिपरक नाटक रंगभूमी पर आए। सामाजिक परिस्थिती पर आधारित यह नाटक तत्कालीन संघर्षमय वातावरण को चित्रित करते थे। इन नाटकोंके पद भी अधिकतर स्फूर्तीदायक तथा देशभक्तिपरक होते थे, जिन्हें दीनानाथ मंगेशकरजी की गायकी तथा पं. रामकृष्णबुवा वझेजी के संगीत दिग्दर्शन में लोकप्रियता प्राप्त हुई।

महाराष्ट्र में प्रचलित भावगीत नामक गीतप्रकार का प्रभाव भी संगीत नाटकोंपर 1940 के दशक के आरंभ से दिखाई देता है। जहाँ पहले संगीत नाटकोंमें शास्त्रीय संगीत की भरमार होती थी, वहां इस दशक में

भावगीत की तरह शब्दप्रधान तथा सुगम संगीत की तरह तीन या चार मिनट के लघु अवकाश में प्रस्तुत होनेवाले गीतनुमा पदों का समावेश नाटकोंमें होने लगा। नाटकोंमें गीतोंकी संख्या को घटाकर कम किया गया। इस युग के संगीत नाटकोंके पदोंपर चित्रपट संगीत का प्रभाव दिखाई देता है। इस श्रेणी के नाटकोंमें कुलवधु नाटक संगीत के रूप में आदर्श माना जाता है, जिसके गीत केशवराव भोळेजी ने संगीतबध्द किए थे। इसी कालखंड में होनाजी बाळा, रामजोशी, पठठे् बापूराव आदि शाहिरोंके जीवन पर भी नाटक लिखे गए, जिससे महाराष्ट्र के लोकसंगीत का अर्थात लावणी, पोवाडा, फटका, तमाशा के सवाल जवाब आदी का समावेश भी संगीत नाटकोंमें किया गया। कहा जाता है कि 1950 के दशक से संगीत नाटकोंमे प्रयुक्त संगीत का स्तर गिरता गया। उसी समय चित्रपटोंके प्रभाव से जनता को संगीत नाटकोंका आकर्षण भी नहीं रहा।

1950 के दशक में संगीत नाटक मूर्च्छितावस्था में रहा। साठोत्तर दशक में प्रायोगिक रंगभूमी उदय होने के पश्चात रंगभूमी माध्यम द्वारा संगीत नाटक में भी अलग अलग संभावनाऐं ढूंढना शुरू हुआ। प्रस्थापित विषय से कुछ अलग प्रस्तुत कर उपलब्ध संकेतोंको नयी दृष्टि प्राप्त करानेका काम प्रायोगिक रंगभूमी द्वारा संपन्न हुआ। आशय तथा अभिव्यक्ति में नवीनता लाना यह प्रायोगिक रंगभूमी का प्रमुख उद्देश्श है। आशय –प्रतिक–प्रतिमाओंके उपयोग द्वारा नए बाजोंकी निर्मिती, पुराने बाजोंका जीर्णोध्दार, अपरिचित वस्तुस्थितीयोंको प्रकाश में लाना, इससे लेकर नाटयप्रयोग के प्रस्तुती में नेपथ्य, प्रकाश, रंगभूषा, वेषभूषा, मंचयोजन, संवादशैली, अभिनयशैली, प्रयोग के रूपनिर्णय में भी प्रायोगिक रंगभूमी सहाय्यकारी होती है। परंतु इन सभी प्रयासोंके पीछे का उद्देश्श नाटयानुभव नए तरीके से सिध्द करना यही होता है।

1960 के दशक में पं. विद्याधर गोखलेजी ने पुनःश्च संगीत नाटकोंमें शास्त्रीय संगीत पर आधारित संगीत का पुरस्कार किया। आपके द्वारा लिखे गए आठ – दस संगीत नाटकोंमें अलग अलग संगीतकार, गायकनट, नायिका, नायक आदि रंगभूमी को प्राप्त हुए। इनमें वसंत देसाई जी जैसे चित्रपट संगीत के संगीतकार का समावेश भी था। आपके नाटकोंके विषयोंमें भी काल्पनिक कथाऐं, पौराणिक, ऐतिहासिक, व्यक्तिविशेष, सामाजिक प्रश्न इसप्रकार वैविध्य मिलता है। इसी दशक में श्री. वसंत कानेटकर, वि. वा. शिरवाडकर, रणजीत देसाई आदि नाटककार भी हुए जो पहले केवल गद्य नाटकोंका लेखन करते थे। संगीतकार के रूप में इस दशक में संगीत जगत को पं. जितेंद्र अभिषेकी जी जैसा महान कलाकार प्राप्त हुआ। जितेंद्र अभिषेकी जी ने पुराने तथा नए संगीत का मिश्रण कर जो संगीत नाटकों को संगीत दिया, उनमें कईं अप्रचलित रागों का उपयोग किया। लेकुरे उदंड झाली इस नाटक में उन्होंने पहली बार पाश्चात्य संगीत का ट्रॅक के रूप में उपयोग किया, जिसपर गद्य काव्य का पठन करवाया। कईं वाद्योंका उपयोग कर पूर्व ध्वनिमुद्रित ट्रॅक पर कलाकारोंका नाटक में प्रत्यक्ष गायन कराना इस प्रकार के प्रयोग भी आपने किए। आपने पदोंके लिए स्वतंत्र धुनों की निर्मिती की। उसी प्रकार काव्य की क्लिष्टता को कम कर गझल, टप्पा, ठुमरी, कव्वाली आदि संगीत के विविध बाजोंका संगीत नाटकोंमें बखूबी प्रयोग किया।

इस ऐतिहासिक विकास के साथ हुए परिवर्तनोंके अलावा संगीत नाटक तथा नाटय संगीत में जो अन्य बदलाव आए वे इसप्रकार है।

- **समयमर्यादा :–** नाटयसंगीत के प्रस्तुतीकरण का सौंदर्य नाटय तथा संगीत के योग्य समन्वय से होता है। स्वर, शब्द, लय भाव इन चारों अंगोंसे किसी भी पद का विस्तार होता है। नाटयपद नाटय के प्रसंगोंको परिपूर्ण तथा सहाय्यकारी होता है, जिसमें शब्दोंकी सहाय्यता से आलाप, तथा छोटी तानें आदि का प्रयोग होता है। सभी नाटयपद विस्तारक्षम नहीं होते। संगीत नाटक में कुछ पद प्रासंगिक होते है, तो कुछ कथनशैली पर आधारित, कुछ अभिनययुक्त है तो कुछ रागसंगीत पर आधारित है।

कुछ पद कीर्तनशैली पर आधारित भी होते है। प्रासंगिक पदोंकी समयमर्यादा नाटक में केवल प्रसंग को स्पष्ट करने तक, दो या तीन मिनट की होती है। परंतु रागाधारित तथा अन्य प्रकार के पदोंको कितने समय गाना है, यह वह भूमिका करनेवाले गायक की गायनक्षमता तथा तैयारी पर निर्भर करता है। पुराने समय में कलाकार इन पदों का इतना विस्तार करते थे, कि एक एक पद वन्स मोर के कारण बीस पच्चीस मिनट तक गाया जाता था। एक एक नाटक में पदों की संख्या भी अधिक होती थी। कभी कभी एक नाटक में सौ से भी अधिक पद होते थे। परिणामतः नाटक जो रात में शुरू होता था, सुबह ही खतम होता था। आठ दस घंटोंतक नाटक की प्रस्तुती होती थी। परंतु आज ना तो कलाकार के पास इतना समय है, ना हि रसिकोंके पास। आधुनिक संगीत नाटकोंमें पदोंकी संख्या तथा नाटक का अवधि दोनोंमें कटौती की गयी है। आज नाटकोंका प्रस्तुतीकरण बंद सभागार में किया जाता है, जिसमें समय का ध्यान रखना अनिवार्य हो जाता है। आज संगीत नाटक भी गद्य नाटकों की तरह दो अंकोंकी मर्यादा में ही लिखें जाते हैं।

- **संगीत के लिए ट्रॅक का उपयोग :–** लाइव संगीत का उपयोग यह पारंपारिक संगीत नाटकोंकी पहचान रही है। साधारणतः तबला, हार्मोनियम या ऑर्गन और अन्य अतिरिक्त सहाय्यक वाद्य इसप्रकार संगीत नाटकोंमें वाद्यों का प्रयोग किया जाता था। नाटक के प्रयोग के दौरान वादकोंको भी मंडलियोंके साथ गावों में घूमना पडता था। नाटयसंगीत के स्वरूप के शिल्पकार, शुरूवाती दौर में तालीम मास्तर तथा आजके युग में संगीत दिग्दर्शक रहे है। आधुनिक युग में संगीत नाटकोंके दिग्दर्शक नाटक की सफलता के दृष्टिकोण से संगीत के प्रयोग के बारे में अधिक सजग हो रहे है। 1957 के उपरांत नाटय तथा उसमें प्रयुक्त संगीत विषयक विचारोंमें अमूलाग्र परिवर्तन हुए है।

  आज नाटकोंके संगीत में विविधता आने के कारण कईं नए प्रयोग किए जा रहे है, जिसमें ट्रॅक सिंगींग यह एक प्रमुख परिवर्तन दिखाई देता है। आधुनिक संगीत नाटकोंमे ललित संगीत का अधिक प्रभाव दिखाई देता है। इन पदोंको आकर्षक बनाने हेतु संगीतकार सुगम तथा चित्रपट संगीत की तरह विविध वाद्योंका उपयोग करते है। परंतु इन सभी कलाकारोंको प्रयोग के लिए साथ ले जाना आयोजकोंके लिए आर्थिक दृष्टिकोण से संभव नहीं है। इसी लिए आधुनिक संगीत नाटकोंमें कुछ पदोंका गायन ट्रॅक पर किया जाता है जिसमें केवल गायन प्रत्यक्ष रूपमें प्रस्तुत हेाता है।

- **पदों की धुनों में परिवर्तन :–** नवप्रयोंगोंके अंतर्गत नाटयसंगीत के कईं पदोंके मूल स्वरूप में परिवर्तन कर उन्हें नया रूप देने का प्रयास किया गया है। पारंपारिक पदोंकी धुनें लोकप्रिय होते हुए भी अपनी प्रतिभाशक्ति को मार्गान्वित करने के लिए नए संगीतकारोंद्वारा इसप्रकार के प्रयास किए जा रहे है। नाटक में प्रयुक्त पद की पृष्ठभूमी तथा वातावरण, वह पद पारंपारिक रूप से जिस राग में प्रयुक्त है उससे अनुरूप ना होने के कारण भी ऐसे पदोंपर पुनर्विचार हो रहा है। इन नए प्रयोगोंका रसिक श्रोताओंद्वारा स्वागत किया जा रहा है।

- **महफिलोंमें नाटयपदोंकी प्रस्तुती :–** नाटयसंगीत को प्राप्त हुई लोकप्रियता के कारण संगीत नाटकोंके पदोंका गायन आज महाराष्ट्र तथा गोवा के शास्त्रीय संगीत के कलाकार अपनी महफिलोंमें लोकाग्रह के कारण कर रहे हैं। इससे श्रोताओंको पुनःप्रत्यय का आनंद प्राप्त होता है। आजकल संकल्पना आधारित नाटयसंगीत की महफिलोंका आयोजन किया जाता है, जैसे, साभिनय नाटसंगीत प्रस्तुतीकरण, नाटयसंगीत का ऐतिहासिक विकास, विशिष्ट कलाकार या संगीत दिग्दर्शक के पदों की प्रस्तुती, किसी विशिष्ट नाटक के पद इ. इस प्रस्तुतीकरण के समय ऐसे ही पदोंकी प्रस्तुती होती है, जो विस्तारक्षम हों। गायक कलाकारोंद्वारा अपनी महफिलोंमें नाटयसंगीत के प्रदर्शन से नाटयसंगीत को एक अलग

सौंदर्य तथा परिभाषा प्राप्त हुई है। संगीत नाटक तथा नाटयसंगीत को प्रवाही रखने का कार्य आज नाटयसंगीत की महफिलोंमें प्रस्तुतीकरण से हो रहा है, जिससे आज भी नाटयसंगीत का आकर्षण संगीत प्रेमियोंमें है यह सिध्द होता है।

- **नाटकों का अभिवाचन :–** आज की युवा पीढी द्वारा इन नाटकों को अभिवाचन के रूप में भी प्रस्तुत किया जा रहा है, जो संगीत नाटकोंके लिए एक नया प्रयोग माना जाता है। संगीत नाटकोंकी परंपरा के जतन तथा संवर्धन में इस प्रयोग को महत्त्वपूर्ण माना जाता है। विशेषतः युवा पीढी को संगीत सौभद्र, संगीत मंदारमाला, संगीत संशयकल्लोळ आदि कलाकृतियोंके बारे में अवगत कराने हेतू मूल नाटक की संहिता का अभिवाचन कर उनका सादरीकरण किया जाता है। साथ में पदोंका गायन भी होता है। इसप्रकार नाटक में आवश्यक नेपथ्य, प्रकाशयोजना, वेशभूषा, आणि साधनोंके बिना केवल आवाज तथा प्रभावी वाचन द्वारा संपूर्ण नाटक अभिवाचक रसिकोंके लिए प्रस्तुत करते है। मुंबई में वेध नामक संस्था इसप्रकार के प्रयोगोंमें अग्रेसर है।
- **नाटकों के पुनरूत्थान के प्रयास :–** महाराष्ट्र के संगीत रंगभूमि के अवनत काल के पश्चात संगीत नाटकेांका पुनरूत्थान करने तथा नए विषयेांपर संगीत नाटकोंकी निर्मिती करने के उद्देश से प्रायोगिक संस्थाओंद्वारा अलग अलग विषयोंपर संगीत नाटक लिखे गए, जो आगे चलकर व्यावसायिक रंगभूमी का हिस्सा बनें। इन नाटकोंमें विहीत तत्त्वोंको व्यावसायिक रंगभूमी के स्थायी तत्त्वों के रूप मे स्विकारा गया। इस कार्य में संगीत नाटक संबंधी अलग अलग संस्थाऐं, तथा महाराष्ट्र शासन का अमूल्य योगदान रहा।

  आज विद्याधर गोखले संगीत प्रतिष्ठान, मुंबई मराठी साहित्य संघ, नाटयसंपदा, आर्यदुर्गा क्रिएशन्स, अश्वमेध क्रिएशन्स, भद्रकाली प्रोडक्शन आदि अनेक संस्थाओं द्वारा संगीत नाटकोंको पुनरूज्जिवीत करने का प्रयास निरंतर शुरू है। इस कार्य में आज की युवा पीढी का भी संपूर्ण सहयोग प्राप्त हो रहा है। इन नाटकोंमें विविध पात्रोंके लिए संगीत में प्रशिक्षित युवा गायक गायिकाओंकी नियुक्ति की गयी है, जिन्हें रंगभूमी के अनुभवी कलाकारोंसे मार्गदर्शन प्राप्त हेा रहा है। नाटयसंपदा मंच द्वारा संगीत संशयकल्लोळ, अवघा रंग एक झाला, जगणे व्हावे गाणे, तथा संगीत मत्स्यगंधा आदि नाटक नए रूप में मंचित हो रहे है, तथा इन नाटकों को सकारात्मक रूप में स्विकार किया गया है। प्रायोगिक रंगभूमि से भद्रकाली प्रोडक्शन्स द्वारा व्यावसायिक रंगभूमी पर मंचित हुआ संगीत देवबाभळी यह नाटक भी आज रसिकोंको आकर्षित कर रहा है। पारंपारिक संगीत नाटकोंकी अपेक्षा इस नाटक में कथा, संगीत, नेपथ्य, प्रकाशयोजना, वेशभूषा, रंगभूषा आदि सभी की प्रस्तुती में विविधता दिखाई देती है। इस नाटक का आशय, विषय भी मुख्य धारा के संगीत नाटक से अलग है। एक संगीत नाटक होते हुए भी व्यावसायिक रंगभूमी पर इस नाटक को सर्वोत्कृष्ट मराठी नाटक के रूप में कईं पुरस्कार प्राप्त हुए है। पारंपारिक तथा लोकसंगीत का मिश्रण इस नाटक में दिखाई देता है। ट्रॅक संगीत के साथ ही लाइव संगीत का प्रयोग भी इसमें है।

संगीत नाटक तथा नाटयसंगीत के जतन–संवर्धन के प्रयास

- **नाटयसंगीत का प्रशिक्षण** :– पुराने समय में नाटक में काम करनेवाले कलाकारोंको पदों का प्रशिक्षण देने का कार्य तालीम मास्तर द्वारा किया जाता था। नाटयसंगीत को संगीत की महफिलोंमें स्थान प्राप्त होनेके पश्चात नाटयसंगीत के प्रशिक्षण की आवश्यकता महसूस हुई। योग्य गुरूओंके मार्गदर्शन में नाटयसंगीत का प्रशिक्षण लेने से आवाज लगाने की पध्दती तथा उसकी गायकी का अभ्यास सुचारू

रूप से होना संभव होता है, जिससे प्रस्तुतीकरण में अपेक्षित परिणाम प्राप्त होगा। संगीत नाटकोंमे काम करनेवाले अनेक कलाकार आज नाटयसंगीत के प्रशिक्षण का कार्य कर रहे हैं। मुंबई में विद्याधर गोखले संगीत नाटय प्रतिष्ठान की ओर से नाटयसंगीत का पदविका अभ्यासक्रम चलाया जाता है। पदविका प्राप्त विद्यार्थियोंके सहभाग से प्रतिष्ठान की ओर से नाटयसंगीत अथवा संगीत रंगभूमी से संबंधित कार्यक्रमोंका आयोजन किया जाता है। नाटयसंगीत का प्रशिक्षण देनेवाली कईं संस्थाऐं आज महाराष्ट्र में उभर रहीं है।

- **संगीत नाटक की प्रतियोगिताओंका आयोजन :–** मराठी संगीत रंगभूमी के जतन–संवर्धन में महाराष्ट्र शासन का महत्त्वपूर्ण योगदान मिल रहा है। महाराष्ट्र राज्य सांस्कृतिक कार्यसंचलनालय की ओर से हर वर्ष संगीत नाटय प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है, जिसमें राज्य के सभी कोनोंसे प्रायोगिक नाटयसंस्थाऐं सहभागी होती है। इसी तरह महाराष्ट्र की, विशेषरूप से गोवा, मुंबई, कोल्हापूर, पुणे में कार्यरत नाटयसंस्थाओंद्वारा भी संगीत नाटक तथा राज्यस्तरीय नाटयसंगीत की प्रतियोगिताओंका आयोजन किया जाता है। गुणवत्ता प्राप्त कलाकारोंको संगीत नाटकोंमें काम करने का अवसर प्रदान किया जाता है।
- **नए संगीत नाटकोंकी निर्मिती में प्रोत्साहन :–** महाराष्ट्र शासन की ओर से गत पच्चीस वर्षोंसे भी अधिक समय से तीन दिवसीय मराठी संगीत नाटक महोत्सव का आयोजन मुंबई के नेहरू सेंटर में किया जाता है। इस महोत्सव में पुराने नाटकोंके प्रस्तुतीकरण के साथ ही नए नाटकोंकी निर्मिती के भी प्रयास किए जाते है। इसी श्रुंखला में नेहरू सेंटर द्वारा संगीत आराधना, संगीत शीतवियोग, संगीत शापित गंधर्व, संगीत भागमती इ. नवीन नाटकोंके साथ कुल 17 नाटकोंकी निर्मिती की गयी है। रंगभूमि पर मंचित होनेवाले प्रत्येक व्यावसायिक संगीत नाटक को शासन की ओर से हर एक प्रयोग के लिए पच्चीस हजार रूपयोंकी राशि अनुदान के रूप में प्रदान की जाती है जिससे नाटयनिर्माताओंपर पडनेवाला वित्तिय बोझ कम हों।
- **जीएसटी से छूट :–** व्यावसायिक दृष्टिकोण से संगीत नाटक रंगमंच पर लाना एक अत्यंत कठिन तथा चुनौतीपूर्ण बात है। रंगभूमी के लिए जीएसटी लागू होने के कारण नाटय व्यवसाय में मंदी का वातावरण था। विशेषतः सीमित रसिकवर्ग प्राप्त संगीत रंगभूमि के लिए यह एक बडी चुनौती थी। परंतु नाटयनिर्माताओंके अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप शासन द्वारा मराठी रंगभूमी को जीएसटी मुक्त कर दिया है, जिसमें प्रादेशिक नाटक, लोककला, और सांस्कृतिक कार्यक्रमोंका समावेश है।। यह बात मराठी संगीत रंगभूमि के लिए निश्चित ही प्रेरणादायी है।
- **संगीत नाटकों का चित्रपट के रूप में परिवर्तन :–** संगीत नाटकोंके प्रदर्शन का मुख्य हेतू नाटक तथा संगीत द्वारा मनोरंजन ही रहा है। संगीत नाटकोंके प्रारंभिक काल में मनोरंजन के अन्य साधन उपलब्ध न होने के कारण इन नाटकोंको देखने हेतु श्रोताओं तथा दर्शकोंकी उपस्थिती बडी मात्रा में होती थी। परंतु बोलपट तथा चित्रपटोंजैसे अधिक आकर्षक तथा व्यावसायिक दृक–श्राव्य माध्यमोंके विकास के साथ ही संगीत नाटक देखनेवाले रसिकोंकी संख्या घटने लगी। आज इन नाटकोंको चित्रपटोंके माध्यम से पुनः प्रकाश में लाकर लोकप्रिय बनाने के सफल प्रयास हो रहे हैं। इसका उत्तम उदाहरण हमें कटयार काळजात घुसली इस मराठी चित्रपट से सहज प्राप्त होगा जिसने बॉक्स ऑफिस सभी रेकॉर्ड तोड दिए।

निष्कर्ष

महाराष्ट्र की नाटयपरंपरा ने संगीत नाटक इस नए कलाप्रकार की निर्मिती की, जो संगीत तथा रंगभूमी दोनोंके लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा। उच्चकोटी का संगीत समाज तक पँहुचाना जिस समय संभव नहीं था, उस समय अल्पावधी में अण्णासाहब किर्लोस्करजी ने संगीत नाटकोंकी निर्मिती कर संगीत नाटक यह प्रकार जनमानस में लोकप्रिय किया। हर विषयोंपर आधारित नाटक, उसमें लोकप्रिय संगीत का प्रयोग, अलग अलग वाद्योंका प्रयोग, तथा विविध नाटक मंडलियोंद्वारा किए गए प्रयोगोंके आधारपर संगीत नाटक महाराष्ट्र की सांस्कृतिक गतिविधीयोंका अहम हिस्सा बना। संगीत नाटकों के साहित्य तथा संगीत दोनों में कालानुरूप परिवर्तन अवश्य हुए है, परंतु इन्ही परिवर्तनोंनें इस विधा को स्थायित्त्व प्रदान किया है। नाटयसंगीत की शैली का सर्वसंमत एकरूप ना होते हुए भी इस शैली ने मराठी रसिकों में एक आकर्षण निर्माण किया है।

संगीत नाटक को एक फॉर्म के रूप में आधुनिक युग में जीवित रखने के लिए परंपरा तथा प्रयोगशीलता का योग्य समन्वय रखना आवश्यक है। उसके लिए नए नए विषयोंपर नाटक लिखने अथवा पुराने नाटकोंके आलेख अथवा कथानक में कालानुरूप परिवर्तन कर उन्हें समकालीन नाटकोंसे समांतर रूप में प्रस्तुत करना आवश्यक है।

संदर्भग्रंथ

1) मराठी नाटयसंगीत :– स्वरूप आणि समीक्षा, विजया टिळक, त्रिदल प्रकाशन, गिरगाव, मुंबई,1999.

2) ध्वनिमुद्रिकांतील गंधर्व गायकी भाग 1,2 :– रमेश विनायक अभ्यंकर, तरंग प्रकाशन, विक्रोळी मुंबई.

3) मराठी नाटयसृष्टी खंड 2, विश्नाथ पांडुरंग दांडेकर, 1945.

4) वेध मराठी नाटयसंगीताचा, जयराम पोतदार, डायमंड पब्लिकेशन पुणे, मार्च 2011.

5) वेध :–संगीत नाटक आणि नाटयसंगीत – डॉ. श्रीरंग संगोराम, प्रोग्रेसिव्ह ड्रामॅटिक असोसिएशन, पुणे,

6) संगीताने गाजलेली रंगभूमी :– बाबूराव जोशी, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, विजयानगर कॉलनी, पुणे, द्वितीय आवृत्ती, 1974.